जैन
पथप्रदर्शक

ए-4, बापूनगर, जयपुर - 302015 (राज.)

नैतिक एवं सामाजिक चेतना का अग्रदूत निष्पक्ष पाक्षिक

बिना नैतिक और धार्मिक जीवन के आध्यात्मिक साधना संभव नहीं है।

ह्न बिन्दु में सिन्धु, पृष्ठ - 8

वर्ष : 26, अंक : 23 | **सम्पादक :** पण्डित रतनचन्द भारिल्ल | आजीवन शुल्क : 251 रुपये
मार्च (प्रथम) 2004 | **प्रबन्ध सम्पादक :** पं. संजीवकुमार गोधा व पं. जितेन्द्र वि. राठी | वार्षिक शुल्क : 25 रुपये, एकप्रति : 2/-

पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव सानन्द सम्पन्न

टीकमगढ़ (म.प्र.) : यहाँ श्री कुन्दकुन्द दिगम्बर जैन मुमुक्षु मण्डल ट्रस्ट के तत्त्वावधान में श्री 1008 सीमन्धर-शांतिनाथ जिनालय टीकमगढ़ में अखिल भारतीय जैन युवा फैडरेशन, अखिल भारतीय जैन महिला फैडरेशन एवं वीतराग-विज्ञान बाल मण्डल टीकमगढ़ के सहयोग से दिनांक 16 फरवरी से 22 फरवरी 2004 तक श्री 1008 नेमिनाथ दिगम्बर जिनबिम्ब पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव विविध धार्मिक आयोजनों के साथ सानन्द सम्पन्न हुआ।

कार्यक्रम का शुभारंभ प्रतिदिन प्रात: पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी के सी.डी. प्रवचन से होता था। इसी क्रम में अन्तर्राष्ट्रीय ख्यातिप्राप्त तार्किक विद्वान डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल जयपुर के पंचकल्याणक के विविध विषयों पर मार्मिक प्रवचन हुये। साथ ही डॉ. उत्तमचन्दजी जैन सिवनी, पण्डित अभयकुमारजी शास्त्री छिन्दवाड़ा, पण्डित कैलाशचन्दजी 'अचल' भोपाल, डॉ.योगेशजी शास्त्री अलीगंज, डॉ. सुदीपजी शास्त्री दिल्ली, पण्डित राकेशकुमारजी शास्त्री नागपुर एवं पण्डित सुरेन्द्रकुमारजी जैन उज्जैन आदि विद्वानों के मंगल प्रवचनों का लाभ भी सकल समाज को मिला।

स्थानीय विद्वानों में पण्डित सुरेशजी जैन पिपरा, पण्डित राजेन्द्रजी चंदावली एवं पण्डित अरविन्दजी शास्त्री टीकमगढ़ उपस्थित थे।

महोत्सव की सम्पूर्ण प्रतिष्ठा विधि बाल ब्र. पण्डित जतीशचन्दजी शास्त्री सनावद के निर्देशन में प्रतिष्ठाचार्य बाल ब्र.पण्डित अभिनन्दनकुमारजी शास्त्री खनियांधाना एवं पण्डित सुबोधजी शास्त्री शाहगढ़, पण्डित सुकुमालजी झांझरी उज्जैन, पण्डित संदीपजी शास्त्री छतरपुर, पण्डित मनीषजी शास्त्री रहली, पण्डित अभयजी शास्त्री खैरागढ़, पण्डित मुकेशजी कोठेदार खनियांधाना आदि सहयोगियों द्वारा शुद्ध-आम्नायपूर्वक सम्पन्न कराई गई।

इस अवसर पर मूलनायक 1008 श्री शांतिनाथ भगवान तथा विधिनायक श्री नेमिनाथ भगवान के अतिरिक्त श्री आदिनाथ भगवान, श्री कुन्थुनाथ भगवान, श्री अरनाथ भगवान, श्री चन्द्रप्रभ भगवान, श्री वासुपूज्य भगवान, श्री मल्लिनाथ भगवान, श्री पार्श्वनाथ भगवान, शासननायक श्री महावीर भगवान एवं श्री सीमन्धर भगवान की मनोज्ञ भाववाही प्रतिमायें विराजमान की गई।

दिनांक 16 फरवरी को प्रतिष्ठा महोत्सव का ध्वजारोहण श्री वृन्दावनलालजी कर्तारचन्दजी जैन ललितपुर ने किया। प्रतिष्ठामण्डप का उद्घाटन श्री आनंदीलाल अनूपकुमारजी नजा ललितपुर, प्रतिष्ठामंच का उद्घाटन श्री सवाई सिंघई सुन्दरलाल अशोककुमार जैन परिवार टीकमगढ़ तथा नेमिनाथ द्वार का उद्घाटन श्री अजितकुमारजी सौरया परिवार मड़ावरा द्वारा किया गया।

इस शुभ अवसरपर आयोजित याग मण्डल विधान एवं नेमिनाथ मण्डल विधान का उद्घाटन श्रीमान् नत्थुलालजी जैन परिवार बृजपुर (पन्ना) द्वारा किया गया।

महामहोत्सव में नेमिकुमार के माता-पिता बनने का सौभाग्य श्रीमती पुष्पादेवी एवं श्री सनतकुमारजी ठगन, टीकमगढ़ ने प्राप्त किया तथा राजमती राजुल के माता-पिता बनने का सौभाग्य श्रीमती शशी जैन एवं श्री प्रेमचन्दजी जैन टीकमगढ़ एवं यज्ञनायक श्रीमती सुरुचि जैन एवं श्री नरेन्द्रकुमार जैन थे।

महोत्सव में अखिल भारतीय जैन युवा फैडरेशन इन्दौर (मण्डलेश्वर) की ओर से सती अंजना नामक ज्ञानवर्धक एवं वैराग्यप्रेरक नाटक की प्रस्तुति की गई।

जन्मकल्याणक के दिन मैनपुरी (उ.प्र.) से आया मणिमयी रत्नजड़ित पालना विशेष आकर्षण का केन्द्र रहा।

सम्पूर्ण कार्यक्रम को सफल बनाने में श्री टोडरमल संगीत सरिता जयपुर, अखिल भारतीय जैन युवा फैडरेशन शाखा मौ, अखिल भारतीय जैन युवा फैडरेशन खनियांधाना आदि का विशेष सहयोग प्राप्त हुआ।

महोत्सव में भारतवर्ष के कोने-कोने से पधारे लगभग 5 हजार जैन साधर्मी बन्धुओं ने भाग लिया। महोत्सव के माध्यम से लगभग 50 हजार रुपयों का सत्साहित्य एवं 11 हजार 325 रुपयों के प्रवचनों के 511 ऑडियो एवं सी.डी. कैसिट्स घर-घर पहुँचे। **ह्न आशीष शास्त्री**

सम्पादकीय –

पञ्चास्तिकाय परिशीलन

4 ह्न रतनचन्द भारिल्ल

गाथा २

समणमुहुग्गदमट्ठं चदुग्गदिणिवारणं सणिव्वाणं।
एसो पणमिय सिरसा समयमिणं सुणह वोच्छामि।।२।।

(हरिगीत)

सर्वज्ञभाषित भवनिवारक मुक्ति के जो हेतु हैं।
उस समय को नमकर कहूँ मैं ध्यान से उसको सुनो।।2।।

इस गाथा में आचार्य कुन्दकुन्ददेव ने जो कहा है, उसका भाव इसप्रकार है कि ''महामुनि श्रमण के मुख से निकले हुए अर्थात् सर्वज्ञभाषित शब्दसमय एवं अर्थसमय को तथा चारगति का निवारण करनेवाले और निर्वाण के कारणभूत भावसमय को शिरसा नमन करके मैं समय का कथन करता हूँ–पंचास्तिकाय का कथन करता हूँ। तुम उसे श्रवण करो !''

यहाँ आचार्य अमृतचन्द्र ने टीका में जो कहा है उसका तात्पर्य यह हैं कि ''श्रीमद्भगवत्कुन्द–कुन्दाचार्यदेव प्रतिज्ञा करते हैं कि ह्न हम 'शब्द–समय' अर्थात् आगम को प्रणाम करके स्वयं उसका कथन करेंगे। वह समय प्रणाम करने एवं कथन करने योग्य है; क्योंकि वह आप्त द्वारा उपदिष्ट होने से सफल है। यहाँ 'श्रमण के मुख से निकला हुआ अर्थसमय' ऐसा जो कहा है, उसका अर्थ यह है कि जो वीतराग सर्वज्ञदेव महाश्रमण के मुख से निकले हुए शब्दसमय को सुनकर, उस शब्दसमय के वाच्यभूत पंचास्तिकायस्वरूप अर्थसमय को जानकर और उसमें आ जानेवाले शुद्ध जीवास्तिकायस्वरूप अर्थ में (पदार्थ में) वीतराग निर्विकल्प समाधि द्वारा स्थित रहता है, वह चारगति का निवारण करके अर्थात् निर्वाण प्राप्त करके, स्वात्मोत्पन्न, अनाकुलता–लक्षण, अनन्त सुख को प्राप्त करता है। इसकारण से द्रव्यागमरूप शब्दसमय नमस्कार करने तथा व्याख्यान करनेयोग्य है।''

आचार्य जयसेन ने भी श्रमण का अर्थ सर्वज्ञ ही किया है। उनके शेष स्पष्टीकरण में भी आचार्य अमृतचन्द्र का ही अनुसरण है।

इस दूसरी गाथा के स्पष्टीकरण में गुरुदेव श्री कानजी स्वामी ने वस्तु की स्वतंत्रता और निमित्त–नैमित्तिक सहज संबंध को स्पष्ट करते हुए गाथा का जो अभिप्राय खोला है, वह विशेष ध्यान देने योग्य है। वे कहते हैं कि ह्न ''आत्मा वाणी का कर्त्ता नहीं है; पर निमित्त का ज्ञान कराने के लिये उसे वाणी का कर्त्ता उपचार से कहा जाता है। 'मैं कुन्दकुन्दाचार्य, इस पंचास्तिकायरूप समयसार नाम के ग्रंथ को कहूँगा' ह्न यह व्यवहार का कथन है। आत्मा वाणी को कर ही नहीं सकता है; इसीप्रकार वाणी से आत्मा समझता भी नहीं है; फिर भी यह वाक्य यहाँ जो लिखा है, वह निमित्त का ज्ञान कराने के लिए लिखा है। भाषा तो भाषा के कारण से निकलती है। 'मैं कहूँगा' ह्न ये शब्द शब्द के कारण से निकलते हैं; परन्तु पंचास्तिकाय कहने में निमित्त कौन है ? ह्न इसका यहाँ ज्ञान कराते हैं। तथा यह जो कहते हैं कि 'इस ग्रंथ को तुम जानो' ह्न वहाँ भी जिसकी समझने की योग्यता होगी, वही समझेगा; दूसरा जीव समझा दे ह्न ऐसा नहीं है; फिर भी 'सुनो' ऐसा कहने का हेतु मात्र इतना ही है कि सामनेवाला जीव पात्र है, पंचास्तिकाय समझने लायक है।

यहाँ यदि कोई कहे कि 'वाणी तो नहीं होनी थी; पर आचार्य के विकल्प से वाणी का परिणमन हो गया है' ह्न सो ऐसा कदापि नहीं है; अपितु वाणी के उपादानकर्ता जड़ परमाणु स्वयं हैं। यद्यपि वहाँ आचार्यदेव को विकल्प था; अतः आचार्यदेव को उपचार से वाणी का निमित्तकर्त्ता कहा जाता है। निमित्तकर्त्ता का अर्थ जड़ की पर्याय होने में कुछ मदद करना नहीं है। वाणी जड़ है, उसे आत्मा बना नहीं सकता है। उससमय आचार्य भगवान को जो विकल्प उत्पन्न हुआ; उसका ज्ञान कराया है।''

गुरुदेवश्री आगे श्रमण का अर्थ सर्वज्ञ करते हुए कहते हैं कि ''आचार्य कुन्दकुन्ददेव श्रमण अर्थात् सर्वज्ञ वीतरागदेव की दिव्यवाणी से उत्पन्न हुये वचनों को मस्तक से प्रणाम करके कहेंगे; क्योंकि सर्वज्ञ के वचन ही प्रमाणभूत हैं। अतः उनके आगम को ही नमस्कार करना योग्य है। देखो! सर्वज्ञ भगवान की वाणी को भी सर्वज्ञ के समान कहा है, उनकी वाणी आत्मा के सभी प्रदेशों से निकलती है। कंठ, ओंठ इत्यादि सभी निमित्तों से रहित निकलती है; क्योंकि वाणी के निकलते समय होंठ, कंठ, जीभ इत्यादि हिलते ही नहीं हैं, श्वाँस नहीं लेना पड़ती है ह्न ऐसी असंख्यप्रदेशों से वाणी निकलती है। इस वाणी को बहुमान देने के लिये कहा है कि यह भगवान की वाणी है तथा मस्तक से उसे प्रणाम करने को कहा है तो मस्तक तो जड़ है और आत्मा मस्तक को झुका नहीं सकता है; पर यह कथन उनका विनयभाव बताता है।

जिसतरह लोक में सूर्य की पूजा दीपक से करते हैं, नदी की पूजा नदी के पानी की अंजलि से करते हैं; उसीप्रकार भगवान की वाणी की पूजा भी आचार्यदेव वाणी से करते हैं।

प्रश्न : वाणी तो जड़ है, उसको नमस्कार क्यों किया ?

उत्तर : भाई ! यह सर्वज्ञ की वाणी है और पुरुष की प्रामाणिकता से वचनों की प्रामाणिकता होती है; अतः उनकी वाणी को नमस्कार किया है। जिनके राग दूर हो गया और सर्वज्ञदशा प्रगट हो गई है, ऐसे पुरुष की वाणी ही प्रमाण हो सकती है। मिथ्यादृष्टि रागी जीव की वाणी प्रमाण नहीं हो सकती है; परन्तु छद्मस्थ ज्ञानी मुनि हों तो उनकी वाणी भी प्रमाण होती है; क्योंकि जैसा सम्पूर्ण आत्मा भगवान को

प्रगट हो गया है, वैसा ही मुनियों ने प्रतीति में ले लिया है और उस दशा को मुनिराज साध रहे हैं; अतः भावलिंगी मुनि के वचन भी प्रमाण कहलाते हैं। अतः उस वाणी को नमस्कार किया है।[1]

इसतरह सरस्वती को नमस्कार करके मंगलाचरण किया।

सम्पूर्ण कथन का सार यह है कि ह्न यद्यपि प्रत्येक भाषावर्गणारूप परिणमित हुए पुद्गल के परमाणु पूर्ण स्वतंत्र अपने-अपने स्वचतुष्टय की योग्यता से गाथारूप परिणमते हैं; तथापि जीवों की भली होनहार और आचार्य कुन्दकुन्ददेव के उस रूप हुए भावों से अत्यन्त निकट का घना निमित्त-नैमित्तिक संबंध है। अत: भले वाणी वाणी के कारण शब्दरूप परिणमित हुई है; फिर व्यवहार से ऐसा कहा जाता है कि ह्न ''मैं कहता हूँ और तुम ध्यान से सुनो।''

लेखक और वक्ता को जिनवाणी के प्रचार-प्रसार की पवित्र भावना भूमिकानुसार आये बिना नहीं रहती, उस निमित्तरूप वाणी के साथ अनेक भली होनहार वाले भव्य जीवों के नैमित्तिकरूप से तदनुसार परिणमन भी होता है ह्न ऐसा ही सहज निमित्त-नैमित्तिक संबंध होता है। ऐसा ज्ञानी जानते हैं; अत: विकल्पानुसार कार्य करते हुए भी उन्हें कर्तृत्व का अहंकार नहीं होता।

गाथा ३

समवाओ पंचण्हं समउ त्ति जिणुत्तमेहिं पण्णत्तं।
सो चेव हवदि लोओ तत्तो अमिओ अलोओ खं।।३।।

(हरिगीत)

पञ्चास्तिकाय समूह को ही समय जिनवर ने कहा।
यह समय जिसमें वर्तता वह लोक शेष अलोक है।।3।।

इस गाथा में आचार्य कुन्दकुन्ददेव ने जो कहा है, उसका भाव इसप्रकार है ह्न

''पाँच अस्तिकाय का समभावपूर्वक अर्थात् राग-द्वेषरूप विकृति से रहित शाब्दिक निरूपण को अथवा पंचास्तिकाय के सम्यक्बोध को अथवा पाँचों द्रव्यों के समूह को जानने को जिनवरों ने समय कहा है। इन पाँच अस्तिकाय के समूह जितना ही लोक है; उससे आगे अमाप आकाशस्वरूप अलोक है।''

इस गाथा की टीका में आचार्य अमृतचन्द्र जो कहना चाहते हैं, उसका भाव इसप्रकार है कि ह्न ''यहाँ इस गाथा में आचार्य कुन्दकुन्ददेव ने शब्दरूप से, ज्ञानरूप से और अर्थरूप से अर्थात् शब्दसमय, ज्ञानसमय और अर्थसमय ह्न ऐसे तीन प्रकार से 'समय' शब्द का अर्थ कहा है तथा लोक-अलोकरूप विभाग कहा है।

(1) 'पाँच अस्तिकाय का समवाद' अर्थात् मध्यस्थभाव से-राग-द्वेष की विकृति से रहित पाँच अस्तिकाय का मौखिक या शास्त्रारूढ़ निरूपण शब्दसमय है। (2) पंचास्तिकाय का सम्यक् अवाय अर्थात् मिथ्यादर्शन का नाश होने पर सम्यक्ज्ञान होना ज्ञानसमय है। (3) कथन के निमित्त से ज्ञात हुए उस पंचास्तिकाय का ही वस्तुरूप से समवाय (समूह) अर्थसमय है अर्थात् सर्वपदार्थसमूह अर्थसमय है।

यहाँ आचार्य कुन्दकुन्द ज्ञानसमय की प्रसिद्धि के हेतुभूत शब्दसमय के द्वारा अर्थसमय का कथन करना चाहते हैं। वही अर्थसमय अर्थात् समस्त द्रव्यसमूह लोक और अलोक के भेद से दो प्रकार का है। जितने आकाश प्रदेशों में पंचास्तिकाय है, उतना लोक है। उससे आगे अनन्त अलोक है। पंचास्तिकाय जितने क्षेत्र में हैं, उसे छोड़कर शेष अनन्तक्षेत्रवाला अलोकाकाश द्रव्य है। अलोकाकाश शून्यरूप अर्थात् अभावरूप नहीं है; किन्तु वह शुद्ध आकाशद्रव्य है।''

इस गाथा पर व्याख्यान करते हुए गुरुदेवश्री ने जो कहा, उसका भाव इसप्रकार है ह्न

''यहाँ पाँच अस्तिकाय के समूह को समय कहा है। काल का कथन गौण है। काल की अस्ति है; पर वह अस्तिकाय नहीं है। जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म और आकाश ह्न ऐसे पाँच अस्तिकाय हैं। जीव धर्म और अधर्म असंख्यप्रदेशी हैं; अतः उन्हें काय कहा है। एक परमाणु एकप्रदेशी होने पर भी उसमें स्कंधरूप होने की योग्यता है; अतः शुद्ध परमाणुरूप पुद्गल द्रव्य को उपचार से अस्तिकाय कहा है और काल में स्पर्श गुण नहीं है; अतः एक **कालाणु को दूसरे कालाणु के साथ में स्कंधरूप होने की योग्यता नहीं है;** अतः कालाणु अस्तिकाय नहीं है। इस कारण यहाँ काल का वर्णन गौण है।''

समय के तीन भेद हैं ह्न शब्दसमय, ज्ञानसमय और अर्थसमय।

आत्मा यह शब्द तो 'शब्दसमय', आत्मा संबंधी अपना ज्ञान 'ज्ञान-समय' और आत्मवस्तु 'अर्थसमय' है। इसीप्रकार पंचास्तिकाय शब्द तो 'शब्दसमय', पंचास्तिकायसंबंधी अपना ज्ञान 'ज्ञानसमय' और पंचास्ति-कायरूप वस्तु 'अर्थसमय' है।

तीनों स्वतंत्र हैं। शब्द में ज्ञान तथा पदार्थ नहीं हैं। ज्ञान में शब्द तथा पदार्थ नहीं हैं और अर्थ में ज्ञान तथा शब्द नहीं हैं। पंचास्तिकाय - ऐसा शब्द बोला, उसमें पंचास्तिकाय का ज्ञान नहीं है और उसमें पंचास्तिकाय पदार्थ भी नहीं हैं। इसीप्रकार पंचास्तिकाय में से एक जीव को छोड़कर अन्य पदार्थों में शब्द नहीं हैं, ज्ञान में शब्द तथा पदार्थ नहीं हैं; परन्तु शब्दों का और पदार्थों का ज्ञान आ जाता है।

इन तीनों भेदों से पंचास्तिकाय की राग-द्वेष रहित यथार्थ अक्षर, पद और वाक्य की रचना है, उसे **द्रव्यश्रुतरूप शब्द समय कहते हैं।** इस पंचास्तिकाय में अर्थात् द्रव्यश्रुतरूप शब्दों में कहीं भी राग-द्वेष स्थापित हो ह्न ऐसा कथन नहीं है। 'अपना स्वभाव राग-द्वेष रहित है' ह्न जो जीव ऐसा निर्णय करके सम्यग्ज्ञान प्रगट करता है, वह जीव द्रव्य आगम का कथन कर सकता है। वीतराग के शब्द राग-द्वेष का ज्ञान कराते हैं; परन्तु वे राग-द्वेष की स्थापना नहीं करते हैं। इसप्रकार शब्दसमय भी वीतरागता में निमित्त होता है। **(क्रमशः)**

'भारतीय संस्कृति में कर्म सिद्धान्त व्यवस्था' संगोष्ठी सानन्द सम्पन्न

जयपुर : जैन अनुशीलन केन्द्र राजस्थान विश्वविद्यालय जयपुर, त्रिलोक उच्चस्तरीय अध्ययन अनुसंधान संस्थान कोटा एवं अखिल भारतवर्षीय दिग. जैन महासभा लखनऊ के संयुक्त तत्त्वावधान में आयोजित त्रिदिवसीय अखिल भारतीय संगोष्ठी मुनि श्री 108 उर्जयन्तसागरजी महाराज एवं साध्वी सुरेखाजी के सान्निध्य में दिनांक 15 से 17 फरवरी तक सम्पन्न हुई।

दिनांक 15 फरवरी को संगोष्ठी का उद्घाटन श्रीमती सुमित्रा सिंह ने किया। संगोष्ठी की अध्यक्षता प्रो. के.एल. शर्मा, कुलपति-राजस्थान विश्वविद्यालय ने की। संगोष्ठी के प्रमुख वक्ता के रूप में अन्तर्राष्ट्रीय ख्यातिप्राप्त डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल तथा राष्ट्रपति पुरस्कृत प्रो. दयानन्द भार्गव उपस्थित थे।

इस अवसर पर डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल ने अपने उद्बोधन में कहा कि कर्म सिद्धान्त जैनदर्शन और धर्म के लोकहितकारी एवं सार्वभौमिक अबाधित सिद्धान्तों में से एक अद्वितीय सिद्धान्त है। आत्मा का कर्म के साथ संबंध कैसे जुड़ता है ? आत्मा के किन परिणामों से कर्म किन-किन अवस्थाओं में परिणत होते हैं, किस रूप में बदलते हैं। जीव को किसप्रकार से विपाक का वेदन कराते हैं और कर्म क्षय की वह कौनसी विशिष्ट आत्मिक प्रक्रिया है कि अतिशय बलशाली प्रतीत होनेवाले कर्म नि:शेष रूप से क्षय हो जाते हैं आदि बिन्दुओं का अत्यन्त सारगर्भित शैली से प्रतिपादन किया। तथा प्रो. दयानन्द भार्गव एवं एम. ए. अंसारी आदि विद्वानों ने भी अपने विचारों से अवगत कराया।

श्री राजकुमारजी काला ने स्वागत भाषण दिया एवं संगोष्ठी के निर्देशक डॉ. पी.सी. जैन ने समागत सभी विद्वानों का पद्योबद्ध भावभीना परिचय कराया। श्रीमती अनामिका जैन ने धन्यवाद ज्ञापित किया। इसी अवसर पर अमेरिका (वाशिंगटन) से पधारे नीरेन नागदा एवं श्रीमती जया नागदा का डॉ. पी.सी. जैन द्वारा माल्यार्पण कर स्वागत किया गया।

उद्घाटन सत्र के पश्चात् समागत सभी विद्वानों का श्री टोडरमल स्मारक भवन में डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल द्वारा स्वागत किया गया एवं ट्रस्ट से संचालित विभिन्न गतिविधियों का परिचय दिया गया। डॉ. पी. सी. जैन ने संस्था की गतिविधियों की प्रशंसा करते हुये कहा कि ऐसी कोई संस्था इस संसार में नहीं है जो जैन धर्म और दर्शन का इसप्रकार से प्रचार-प्रसार कर रही हो। उन्होंने टोडरमल स्मारक ट्रस्ट द्वारा किये जा रहे प्रयत्नों की महती आवश्यकता बताई। अन्त में आगन्तुक अतिथियों को भोजनोपरान्त स्मारक ट्रस्ट की ओर से सत्साहित्य भेंट किया गया।

दिनांक 16 फरवरी को संगोष्ठी के चतुर्थ सत्र की अध्यक्षता डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल ने की। विशिष्ट अतिथि के रूप में डॉ. टी.सी. कोठारी तथा सारस्वत अतिथि के रूप में श्रुत संवर्धिनी के संपादक डॉ. विजयकुमार जैन एवं प्रो. दामोदर शास्त्री उपस्थित थे। इस सत्र में 10 शोध पत्र पढ़े गये।

संगोष्ठी के पंचम सत्र की अध्यक्षता पण्डित रतनचन्दजी भारिल्ल ने की तथा श्री राजकुमारजी काला, डॉ. टी.सी. कोठारी, श्री चिरंजीलाल बगड़ा, श्री एन. के. खींचा (उपायुक्त ज.वि.प्रा.), डॉ. धर्मेन्द्र कांकरिया, श्री बी.एल. बजाज आदि मंचासीन थे।

संगोष्ठी में उद्घाटन एवं समापन सत्र सहित कुल 8 सत्र हुये; जिनमें प्रथम उद्घाटन सत्र राजस्थान विश्वविद्यालय स्थित वी.सी. सेक्रेट्रेट के सीनेट हॉल में, चतुर्थ सत्र ओम रिवाल्विंग टॉवर एवं शेष छह सत्र भट्टारकजी की नसिंया में सम्पन्न हुये। संगोष्ठी में कुल 108 विद्वानों का आगमन हुआ।

पण्डित रतनचन्दजी भारिल्ल द्वारा विरचित तीर्थंकर स्तवन क्रमश: यहाँ दिया जा रहा है ह्न

12. श्री वासुपूज्य स्तवन

वस्तुस्वातंत्र्य सिद्धान्त महा, कण-कण स्वतंत्र बतलाता है।
फिर कोई किसी का कर्ता बन, कैसे सुख-दु:ख का दाता है ?
हो वीतराग सर्वज्ञ हितंकर, अत: बन गये परम पूज्य।
सौ इन्द्रों द्वारा पूज्य प्रभो! इसलिए कहाये वासुपूज्य।।

13. श्री विमलनाथ स्तवन

हे विमलनाथ! तुम निर्मल हो, कोई भी कर्मकलंक नहीं।
हो वीतराग सर्वज्ञदेव, पर का किंचित् कर्तृत्व नहीं।।
निर्दोष मूलगुण चर्या से, मुनिमार्ग सिखाया है तुमने।
द्वादशांग जिनवाणी से, शिवमार्ग बताया है तुमने।।

14. श्री अनन्तनाथ स्तवन

अनन्त चतुष्टय आलम्बन से, जीते क्रोध काम कल्मष।
भेदज्ञान के बल से जिसने, जीते मोह मान मत्सर।।
शुक्ल ध्यान से जो करते हैं, घाति-अघाति कर्म भंजन।
ऐसे अनन्त नाथ जिनवर को, मन-वच-काया से वन्दन।।

15. श्री धर्मनाथ स्तवन

दया धरम है दान धरम है, प्रभु पूजा धर्म कहाता है।
सत्य-अहिंसा त्याग धरम, जन सेवा धर्म कहाता है।।
ये लोक धरम के विविध रूप, इनसे जग पुण्य कमाता है।
शुद्धातम का ध्यान धरम, बस यही एक शिवदाता है।।

ह्न यह 'तीर्थंकर स्तवन' पुस्तक रूप में भी उपलब्ध है।

'भ. महावीर और वैशाली' विद्वत संगोष्ठी सम्पन्न

पटना (बिहार) : यहाँ दिनांक 15 फरवरी को आयोजित 'भगवान महावीर और वैशाली' नामक विद्वत्संगोष्ठी के प्रथम सत्र की अध्यक्षता डॉ. राजेन्द्रकुमारजी बंसल ने तथा द्वितीय सत्र की अध्यक्षता डॉ. रंजनदेव सूरि ने की। दोनों सत्रों में लगभग 11 विद्वानों ने ऐतिहासिक, पुरातात्त्विक, भौगौलिक तथा साहित्यिक दृष्टिकोण से भगवान महावीर की जन्मभूमि वैशाली के वासोकुण्ड-कुण्डपुर को निरूपित किया और यह स्पष्ट किया कि नालन्दा स्थित बड़ागांव कुण्डलपुर किसी भी दृष्टि से भगवान महावीर की जन्मभूमि नहीं है। संगोष्ठी मे भाग लेनेवाले विद्वानों में सर्वश्री राजमल जैन, डॉ.विद्यानंदजी उपाध्याय, डॉ. ऋषभजी फौजदार, डॉ. प्रफुल्लकुमार सिंह, श्री अखिल बंसल, डॉ. रामसकल सिंह, डॉ. विन्देश्वर हिमांशु, श्रीमती रूबीकुमारी, श्री नागेन्द्रप्रसादजी एवं डॉ. जगदीशप्रसाद पाण्डे आदि उपस्थित थे।

इस अवसर पर उपस्थित जनसमुदाय को जानकारी देते हुये डॉ. रघुवंश प्रसाद सिंह ने कहा कि वैशाली में स्थापित करने हेतु भगवान महावीर की विशाल प्रतिमा बनकर तैयार है, जो अभी कुन्दकुन्द भारती दिल्ली में विराजमान है। उन्होंने कहा कि वैशाली को अन्तर्राष्ट्रीय नक्शे पर लाने का प्रयास भी चल रहा है तथा 10 फरवरी को माननीय प्रधानमंत्री अटलबिहारी वाजपेयी तथा केन्द्रीय रेलमंत्री नीतिशकुमार सिंह द्वारा वैशाली को रेल्वे लाईन से जोड़ने का कार्य भी शिलान्यास द्वारा प्रारंभ कर दिया गया है। **- अखिल बंसल**

शिक्षण-शिविर सानन्द सम्पन्न

तिरुमलै (तमिलनाडू) : यहाँ पौन्नूरमलै में स्थित आचार्य कुन्दकुन्द जैन संस्कृति संस्थान में तिरुमलै अरहंत गिरि मठ के विद्यार्थियों के लिये दिनांक 15 एवं 16 फरवरी को द्विदिवसीय शिक्षण-शिविर का आयोजन किया गया; जिसमें श्री टोडरमल दि. जैन सि. महाविद्यालय के स्नातक पण्डित ए. बालाजी शास्त्री द्वारा बालबोध पाठमाला की कक्षा ली गई।

शिविर के अन्तिम सत्र में लिखित परीक्षा का आयोजन हुआ। समस्त उत्तीर्ण परीक्षार्थियों को श्री अनंतभाई, मुम्बई ने पुरस्कार वितरित किये।

साथ ही 18 फरवरी को कुल्लकुलत्तुर में भी आपने पूजन एवं प्रवचन के माध्यम से समाज में धर्म का स्वरूप समझाया। **ह्न डॉ. दिनेशचन्द्र शाह**

पाठशाला निरीक्षण

श्री वीतराग-विज्ञान विद्यापीठ परीक्षा बोर्ड, जयपुर के अन्तर्गत गुजरात प्रान्त में श्री टोडरमल दिग. जैन सिद्धान्त महाविद्यालय के स्नातक पण्डित ऋषभकुमारजी शास्त्री ललितपुर द्वारा पाठशालाओं का निरीक्षण किया गया। जिसमें दाहोद, बड़ोदरा, सूरत, हिम्मतनगर, तलोद, रखियाल एवं अहमदाबाद के आठ उपनगरों में प्रवचन, कक्षा आदि के माध्यम से धर्म प्रभावना की गई एवं पाठशाला के कुशल संचालन हेतु स्थानीय समाज को आवश्यक निर्देश दिये गये।

अनेक स्थानों पर पाठशालाओं का पुनर्गठन किया। निरीक्षण में प्रान्तीय निरीक्षक श्री सनतजी शाह हिम्मतनगरवालों का भी सहयोग मिला।

वार्षिकोत्सव सम्पन्न

साधनानगर (इन्दौर) : श्री पंचबालयति एवं विरहमान बीस तीर्थंकर जिनालय साधनानगर में दिनांक 11 फरवरी से 16 फरवरी 2004 तक चतुर्थ वार्षिकोत्सव के अवसर पर जैनसमाज के ख्यातिप्राप्त तार्किक विद्वान डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल जयपुर द्वारा प्रवचनसार पर आध्यात्मिक प्रवचन हुये। साथ ही पण्डित देवेन्द्रकुमारजी बिजौलिया द्वारा जिनवाणी की आगम सम्मत बातों को प्रस्तुत किया गया।

इस अवसर पर श्री मांगीलालजी जैन नरसिंहपुरा परिवार द्वारा श्री गणधरवलय ऋषि मण्डल विधान का आयोजन किया गया; जिसपर 21 परिवारों द्वारा स्वर्णकलशों की स्थापना की गई। विधि-विधान के सम्पूर्ण कार्य पं. सौरभजी शास्त्री, पं. गौरवजी शास्त्री, पं. गजेन्द्र शास्त्री, पं. अभिनवजी शास्त्री, पं. श्रेयांसजी शास्त्री एवं दीपकजी द्वारा सम्पन्न कराये गये। **ह्न मनोहरलाल काला**

विधान सम्पन्न

छिन्दवाड़ा (म.प्र.) : श्री आदिनाथ दिगम्बर जैन मंदिर, गोलगंज में 10 वें वार्षिकोत्सव के अन्तर्गत दि. जैन मुमुक्ष मण्डल एवं अखिल भारतीय जैन युवा फैडरेशन द्वारा पंच परमेष्ठी विधान का आयोजन किया गया। विधि-विधान के सम्पूर्ण कार्य पण्डित ऋषभकुमारजी शास्त्री द्वारा सम्पन्न कराये गये।

इस अवसर पर रात्रि में जिनेन्द्र भक्ति के पश्चात् पण्डित अभयकुमारजी शास्त्री द्वारा पंच कल्याणक महोत्सव विषय पर विशेष व्याख्यान हुआ। कार्यक्रम का शुभारंभ ध्वजारोहण से किया गया। **ह्न दीपकराज जैन**

मार्च माह में आनेवाली तीर्थंकरों के पंचकल्याणकों की तिथियाँ

10 मार्च	- भगवान पार्श्वनाथ का ज्ञानकल्याणक
11 मार्च	- भगवान चन्द्रप्रभ का गर्भकल्याणक
14 मार्च	- भगवान शीतलनाथ का गर्भकल्याणक
15 मार्च	- भगवान ऋषभदेव का जन्म एवं तप कल्याणक
20 मार्च	- भगवान अनंतनाथ का ज्ञान एवं मोक्ष कल्याणक
	- भगवान अरनाथ का मोक्षकल्याणक
21 मार्च	- भगवान मल्लिनाथ का गर्भकल्याणक
23 मार्च	- भगवान कुंथुनाथ का ज्ञानकल्याणक
25 मार्च	- भगवान अजितनाथ का मोक्षकल्याणक
27 मार्च	- भगवान संभवनाथ का मोक्षकल्याणक

पत्राचार प्राकृत सर्टिफिकेट पाठ्यक्रम

दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र श्री महावीरजी द्वारा संचालित अपभ्रंश साहित्य अकादमी द्वारा 'पत्राचार प्राकृत सर्टिफिकेट पाठ्यक्रम' प्रारंभ किया जा रहा है। सत्र 1 जुलाई 2004 से प्रारंभ होगा। इसमें प्राकृत, संस्कृत, हिन्दी एवं अन्य भाषाओं/विषयों के प्राध्यापक अपभ्रंश, प्राकृत शोधार्थी एवं संस्थानों में कार्यरत विद्वान सम्मिलित हो सकेंगे। नियमावली एवं आवेदन पत्र दिनांक 25 मार्च से 15 अप्रैल 2004 तक अकादमी कार्यालय, दिगम्बर जैन नसियां भट्टारकजी, सवाई रामसिंह रोड, जयपुर-4 से प्राप्त करें। कार्यालय में आवेदन पत्र पहुँचने की अंतिम तिथि 15 मई 2004 है।

ह्न डॉ. कमलचन्द सोगाणी

प्राप्त दान राशियाँ

1. बापूनगर-जयपुर निवासी श्री सुरेन्द्रकुमारजी रांवका ने पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट की गतिविधियों से प्रभावित होकर वीतराग-विज्ञान (मासिक) को परम संरक्षक के रूप में 10 हजार रुपये प्रदान किये साथ ही जैनपथप्रदर्शक (पाक्षिक) को भी परम संरक्षक के रूप में 10 हजार रुपये प्रदान किये। इसप्रकार आपके द्वारा कुल 20 हजार रुपये की सहायता राशि प्राप्त हुई है। हम आपको धन्यवाद ज्ञापित करते हैं।

2. श्रीमती उर्मिलाबेन के.दोशी की पुण्यस्मृति में उनके परिवार द्वारा 251/-रुपये जैनपथप्रदर्शक को प्राप्त हुये हैं।

3. श्रीमान सोहनलालजी पहाड़िया, नरेश पेपर भण्डार, नई दिल्ली की ओर से जैनपथप्रदर्शक को 201/-रुपये प्राप्त हुये हैं।

4. स्व.श्री धन्नालालजी जैन मालथौन की स्मृति में डॉ. बाबूलालजी जैन की ओर से जैनपथप्रदर्शक एवं वीतराग-विज्ञान को कुल 302/- रुपये प्राप्त हुये हैं।

सभी दान दाताओं को जैनपथप्रदर्शक समिति एवं वीतराग-विज्ञान की ओर से धन्यवाद ज्ञापित करते हुये हम आशा करते हैं कि भविष्य में भी इसीतरह आपका सहयोग हमें प्राप्त होता रहेगा। **- प्रबन्ध सम्पादक**

तत्त्वचर्चा

प्रवचनसार का सार 2

– डॉ॰ हुकमचन्द भारिल्ल

ये टीकाएँ परस्पर प्रतिद्वन्द्वी टीकाएँ नहीं, अपितु परस्पर पूरक टीकाएँ हैं। यदि हमें प्रवचनसार को गहराई से समझना है तो अमृतचन्द्राचार्य की तत्त्वप्रदीपिका नामक टीका को पढ़ना होगा एवं सरलता से सब बात समझ में आ जावे ह्न इसके लिए तात्पर्यवृत्ति टीका को गहराई से पढ़ना होगा। अत: दोनों टीकाओं के सहारे ही प्रवचनसार की संपूर्ण विषयवस्तु समझना समझदारी का काम है।

मंगलाचरण के संदर्भ में विशेष उल्लेखनीय बात यह है कि आचार्य कुन्दकुन्द ने अपने अन्य ग्रन्थों में मात्र एक-एक गाथा में ही मंगलाचरण किया है। समयसार में मात्र सामूहिकरूप से सिद्धों को नमस्कार किया है; किन्तु इस प्रवचनसार ग्रन्थ में भगवान वर्द्धमान के नामोल्लेखपूर्वक पाँच गाथाओं में मंगलाचरण लिखकर सभी आवश्यक पूज्य-पुरुषों का समावेश करने का प्रयास किया है।

एस सुरासुरमणुसिंदवंदिदं धोदघाइकम्ममलं।
पणमामि वड्ढमाणं तित्थं धम्मस्स कत्तारं।।1।।

(हरिगीत)

सुर असुर इन्द्र नरेन्द्र वंदित कर्ममल निर्मलकरन।
वृषतीर्थ के करतार श्री वर्द्धमान जिन शत-शत नमन।।1।।

यह मैं देवेन्द्रों, असुरेन्द्रों, चक्रवर्तियों से पूजित, घातिकर्मरूपी मल को धो डालनेवाले, तीर्थस्वरूप तथा धर्म के कर्त्ता श्री वर्द्धमानस्वामी को प्रणाम करता हूँ।

वैसे तो 24 ही तीर्थंकर अपनी वाणी में एक ही सिद्धान्त का प्रतिपादन करते हैं; अत: यह प्रवचनसार ग्रंथ सभी तीर्थंकरों के प्रवचनों का सार है; परंतु मूल प्रश्न यह है कि अभी शासन किसका चल रहा है?

भगवान महावीर की जो दिव्यध्वनि खिरी थी, उनका जो प्रवचन हुआ था; उसकी ही अविच्छिन्न परम्परा आचार्य कुन्दकुन्द तक आई। उक्त परम्परागत ज्ञान ही इस प्रवचनसार में समाहित हुआ है; अत: यह भगवान महावीर की वाणी का ही सार है। यही कारण है कि कुन्दकुन्दाचार्य ने सर्वप्रथम भगवान महावीर को याद किया।

यहाँ एक प्रश्न उपस्थित होता है कि जब कुन्दकुन्दाचार्य ने भगवान महावीर को नमस्कार किया, तब तो वे सिद्धावस्था में विराजमान थे और कुन्दकुन्दाचार्य 'धोद घाइकम्ममलं' इस विशेषण के माध्यम से यह कहते हैं कि जिन्होंने घातिया कर्मों को धो दिया है। वे यह क्यों नहीं कहते कि जिन्होंने अष्ट कर्मों को धो दिया है ?

जब आचार्यदेव ने उन्हें नमस्कार किया, प्रवचनसार नामक ग्रंथ लिखा; तब भगवान महावीर सिद्धावस्था में विराजमान थे; यह बात परमसत्य होने पर भी आचार्यदेव इस बिन्दु पर ध्यान आकर्षित करना चाहते हैं कि उन्होंने सिद्धदशा को प्राप्त भगवान महावीर को नमस्कार नहीं किया, वरन् अब से 2500 वर्ष पूर्व एवं कुन्दकुन्दाचार्य के समय में 500-600 वर्ष पूर्व जो अरहन्त अवस्था में विद्यमान थे, जिनके प्रवचन हो रहे थे, जिनकी दिव्यध्वनि खिर रही थी; उन्हीं वर्द्धमान अरिहंत भगवान को नमस्कार किया है।

ऐसे प्रयोग हिन्दी साहित्य में भी पाए जाते हैं। जैसे तुलसीदासजी कहते हैं कि यद्यपि मुझे मुरली बजाते हुए श्रीकृष्ण बहुत अच्छे लगते हैं; तथापि **'तुलसी मस्तक जब नमें जब धनुष बाण लेऊ हाथ।'** मेरा माथा तुम्हारे सामने तभी झुकेगा जब तुम धनुष-बाण लेकर मेरे सामने आओगे। यह कहकर महाकवि तुलसीदासजी एक बहुत महत्त्वपूर्ण संदेश देना चाहते है।

वे कहते हैं कि अभी हमें नाचने-गानेवालों की जरूरत नहीं है, इस समय तो हमें धनुष-बाण वाले भगवान चाहिए।

महाकवि तुलसीदास के समय ऐसी विपरीत परिस्थितियाँ थी कि उस समय मुसलमानों ने देश पर आक्रमण किया था और मंदिर व मूर्तियाँ तोड़ी जा रही थीं। ऐसे समय में मुरली बजाकर नाचने-गाने की अपेक्षा धनुष-बाण लेकर अपनी सुरक्षा करना अधिक जरूरी था। इसप्रकार तुलसीदास को धनुषबाणवाले राम की जरूरत थी; जो इन म्लेच्छों से हमारी संस्कृति की रक्षा कर सकें। इसलिए तुलसीदासजी कहते हैं कि हे कृष्ण! तुम्हें नमस्कार करने में तो मुझे कोई बाधा नहीं है; लेकिन जरा कपड़े बदल कर आओ, धनुष-बाण लेकर आओ एवं मुरली को रखकर आओ।

इसीप्रकार आज का मुमुक्षु समाज कहता है कि **विद्वान तो तुम बहुत अच्छे हो, बातें तो हमें तुमसे ही सीखनी हैं; लेकिन नाच-गाना नहीं सीखना है, हमें आत्मा-परमात्मा की बातें सीखनी हैं। हमने तुम्हें आत्मा-परमात्मा की बात सुनने-समझने के लिए बुलाया है और तुम हमें नचा-नचा कर रिझाने लगे।**

ऐसे ही कुन्दकुन्दाचार्यदेव कहते हैं कि हमें वर्द्धमान तो चाहिए; लेकिन धर्मतीर्थ के कर्त्ता वर्द्धमान चाहिए अर्थात् जिनके प्रवचन का सार यह प्रवचनसार है ह्न ऐसे वर्द्धमान चाहिए।

भले ही वे आज सिद्ध हो गए हैं; लेकिन जब उनकी दिव्यध्वनि खिर रही थी, आचार्य कुन्दकुन्द ने उनके उस रूप को याद किया है।

आचार्य कुन्दकुन्द ने धर्मतीर्थ के कर्त्ता वर्द्धमान भगवान को याद किया है; जिन्होंने घातिया कर्म धो डाले हैं एवं जो सुरेन्द्र, असुरेन्द्र एवं नरेन्द्र ह्न इन तीनों के द्वारा वंदनीक है।

संपूर्ण जगत जिन्हें मानता है ह्न ऐसे सौ इन्द्रों ने इन्हें नमस्कार किया है, इन्हें मान्यता दे दी है। इसका स्पष्ट अर्थ यह है कि संपूर्ण जगत इन्हें स्वीकार करता है।

जिसप्रकार प्रधानमंत्री ने किसी समझौते पर हस्ताक्षर किए तो मानों संपूर्ण भारतवासियों ने हस्ताक्षर कर दिए, उस समझौते को मान लिया ह्न ऐसा माना जाता है। उसीप्रकार सौ इन्द्रों ने जिनको नमस्कार किया है, जो धर्मतीर्थ के कर्त्ता हैं, जो चार घातिया कर्मों से रहित हैं; ऐसे अरहन्त अवस्था में विद्यमान भगवान वर्द्धमान को उन्होंने नमस्कार किया है; क्योंकि यह प्रवचनसार उनके प्रवचन का सार है।

मंगलाचरण में मात्र वर्द्धमान भगवान को ही नहीं, अपितु **'शेषे पुण तित्थयरे'** ह्न ऐसा कहकर उन्होंने अन्य तीर्थंकरों को भी नमस्कार किया है।

दूसरी, तीसरी गाथा के माध्यम से आचार्यदेव सिद्ध भगवान, ज्ञान-दर्शन-चारित्र से सम्पन्न आचार्यदेव एवं मनुष्य क्षेत्र में रहनेवाले अरहंतों अर्थात् सीमंधरादिक विद्यमान बीस तीर्थंकरों को याद करते हैं। गणधर शब्द का प्रयोग करके आचार्यों को, उपाध्याय को एवं साधुओं को याद

किया, इसप्रकार संक्षेप में कहें तो आचार्यदेव ने नमस्कार मंत्र में समाहित सभी का स्मरण किया।

पंचपरमेष्ठियों को नमस्कार करके अंत में आचार्य कहते हैं कि अब मैं जिससे मोक्ष की प्राप्ति होती है; उस साम्यभाव का आश्रय लेता हूँ।

इस मंगलाचरण की विशेषता यह है कि आचार्यदेव ने भगवान महावीर की वाणी से स्वयं को बुद्धिपूर्वक जोड़ा है। उन दिनों आचार्यदेव विदेह क्षेत्र से सीमंधर परमात्मा की दिव्यध्वनि सुनकर आए थे; अत: लोग उन्हें बारम्बार 'विदेह क्षेत्र से आए हुए कुन्दकुन्दस्वामी' – ऐसा सम्बोधन करते होंगे।

लोग तो मेरे नाम के आगे भी जोड़ने लगे हैं कि देश-विदेश में प्रख्यात। जिनवाणी का थोड़ा-सा प्रचार किया तो लोग तुरंत विशेषण जोड़ने लगते हैं। क्या पण्डित हुकमचन्द विदेश में नहीं जाता तो क्या छोटा पण्डित होता ? परंतु लोग तो विदेश में जाने की बात को प्रतिदिन याद करते हैं।

विदेह क्षेत्र की महिमा तो बहुत ही अधिक है; क्योंकि वहाँ साक्षात् सीमंधर परमात्मा विराजमान हैं। वे साक्षात् अर्हन्त परमात्मा के दर्शन करके आए थे। यह तो बहुत सौभाग्य का प्रसंग था। अत: उस समय लोग इस बात को बहुत याद करते होंगे।

यही कारण है कि आचार्यदेव सोचते होंगे कि यदि मैंने इस प्रसंग को खोलकर नहीं कहा तो लोग मुझे सीमंधर परमात्मा की वाणी से जोड़ने लगेंगे, भगवान महावीर की वाणी से नहीं। परंतु आचार्यदेव बुद्धिपूर्वक अपनी कृतियों को भगवान महावीर की परम्परा से जोड़ना चाहते हैं। इसलिए उन्होंने मंगलाचरण के माध्यम से स्वयं को भगवान महावीर की परम्परा से जोड़कर प्रस्तुत किया है।

यदि वे अपनी वाणी को सीमंधर परमात्मा से जोड़ते तो फिर अन्य साधु यह विचार करते कि हमें तो यह सौभाग्य प्राप्त नहीं हुआ। इसप्रकार उनके अंदर हीनभावना पनपती।

भविष्य में लोग यह कहते कि कुन्दकुन्द तो प्रमाण हैं; क्योंकि वे सीमंधर परमात्मा से साक्षात् सुनकर आए थे; पर.....।

ऐसी स्थिति में अन्य आचार्यों की वाणी पर स्वयमेव प्रश्नचिन्ह लग जाता। भूतबलि पुष्पदन्त तो गए नहीं थे, जिनसेनाचार्य तो गए नहीं थे, समन्तभद्र तो गए नहीं थे; अत: हम उन्हें प्रमाण माने या नहीं ? इसप्रकार चर्चायें न होने लगे ह्न इसकारण कुन्दकुन्दाचार्य यह नहीं चाहते थे कि उनकी इस व्यक्तिगत उपलब्धि के कारण अन्य आचार्यों की वाणी में प्रामाणिकता का प्रश्नचिह्न खड़ा हो जाए।

सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह है कि सीमंधरपरमात्मा के दर्शन उनकी व्यक्तिगत उपलब्धि थी। वे यह जानते थे कि यदि वे विदेह क्षेत्र नहीं जाते तो भी भगवान महावीर की जो आचार्य परम्परा है; उसमें कोई अंतर नहीं आता।

यदि पण्डित हुकमचन्द विदेश नहीं जाता तो क्या कम उपयोगी होता और विदेश जा आया है तो क्या अधिक उपयोगी हो गया ?

ऐसे ही यदि कुन्दकुन्द सीमंधर परमात्मा के पास नहीं जाते तो भी उनकी महानता में कोई अन्तर आनेवाला नहीं था। यह उपलब्धि है तो अच्छी; परंतु आचार्य कुन्दकुन्द प्रत्येक प्रसंग को उस घटना से नहीं जोड़ना चाहते थे। प्रत्येक प्रसंग को उसी घटना से जोड़े जाने की सम्भावना थी; इसलिए उन्होंने स्वयं को वर्द्धमान स्वामी से जोड़कर प्रवचनसार को लिखने की प्रतिज्ञा की।

यह तो पहले कहा ही जा चुका है कि प्रवचनसार तीन महाधिकारों में विभाजित है ह्न ज्ञानतत्त्वप्रज्ञापन, ज्ञेयतत्त्वप्रज्ञापन एवं चरणानुयोग चूलिका।

ज्ञानतत्त्वप्रज्ञापन महाधिकार में चार अधिकार हैं ह्न 1. शुद्धोपयोगा - धिकार 2. ज्ञानाधिकार 3. सुखाधिकार और 4. शुभपरिणामाधिकार।

शुद्धोपयोग 13वीं गाथा से आरंभ होता है। 6वीं गाथा से 12वीं गाथा तक पीठिका रूप में धर्म की चर्चा है।

7वीं गाथा में आचार्य कहते हैं ह्न

चारित्तं खलु धम्मो धम्मो जो सो समो त्ति णिद्दिट्ठो।
मोहक्खोहविहीणो परिणामो अप्पणो हु समो।।7।।

(हरिगीत)

चारित्र ही बस धर्म है वह धर्म समताभाव है।
दृगमोह-क्षोभविहीन निज परिणाम समताभाव है।।7।।

चारित्र वास्तव में धर्म है, धर्म ही शम है, मोह-क्षोभ से रहित आत्मा का परिणाम ही शम है ह्न ऐसा जिनेन्द्रदेव ने कहा है।

उक्त गाथा को आधार बनाकर लोग हमसे कहते हैं कि देखो, धर्म तो चारित्र ही है, तुम्हारा सम्यग्दर्शन नहीं।

वे इसतरह बात करते हैं कि जैसे हम चारित्र को मानते ही न हों। अरे भाई ! हम भी तो सच्चे दिल से यह स्वीकार करते हैं कि चारित्र ही धर्म है।

अरे भाई ! अष्टपाहुड़ में यह भी तो लिखा है कि **दंसणमूलो धम्मो** अर्थात् सम्यग्दर्शन धर्म का मूल है।

मूल अर्थात् जड़। सम्यग्दर्शन तो धर्म की जड़ है। जब सम्यग्दर्शनरूप जड़ होगी तभी चारित्ररूपी धर्म का वृक्ष उगेगा।

देखो, जड़ जमीन के भीतर रहती है और वृक्ष ऊपर होता है। वृक्ष संपूर्ण जगत को दिखाई देता है। वृक्ष के फलों से, फूलों से, छाया से सारा जगत लाभान्वित होता है; परंतु जमीन के अंदर जो जड़ है; वह किसी को दिखाई नहीं देती। उस जड़ से लोक को कोई सीधा लाभ भी प्राप्त नहीं होता; लेकिन वह जड़ नहीं हो तो क्या तना खड़ा रह सकता है? क्या जड़ नहीं हो तो फल-फूल हो सकते हैं?

तने का जितना विस्तार होता है; उसी अनुपात में जमीन के अंदर नीचे जड़ों का भी विस्तार होता है। यदि ऊपर एक शाखा दक्षिण की तरफ दस फुट गई है तो नीचे जड़ भी उसी शाखा की दिशा में लगभग उतनी ही दूर तक जाती है। यदि ऐसा न हो तो वह वृक्ष शाखाओं के बोझ से अनियन्त्रित हो जाएगा। जितनी-जितनी शाखाएँ चारों तरफ फूटती हैं; उतनी-उतनी ही जड़ें नीचे की तरफ चारों तरफ फूटती हैं। जो पेड़ लम्बा-लम्बा जाएगा, उस पेड़ की जड़ें भी नीचे की ओर उतनी ही गहरी जाएगी। जड़ों के कारण वह वृक्ष न केवल स्थिर है, अपितु वह खुराक भी जड़ों से ही लेता है। जड़ों से खुराक लेकर ही वृक्ष हरा-भरा रहता है।

जैसे जड़ के बिना वृक्ष की कल्पना नहीं की जा सकती है; उसीप्रकार सम्यग्दर्शन के बिना सम्यक्चारित्र की भी कल्पना नहीं की जा सकती है। **(क्रमश:)**

रजिस्ट्रेशन आर. एन. आई. 31109/77

महाराष्ट्र प्रान्तीय सम्मेलन सम्पन्न

कारंजा (महा.): श्री कुन्दकुन्द दिगम्बर जैन स्वाध्याय मण्डल ट्रस्ट नागपुर के अन्तर्गत श्री अखिल भारतीय जैन युवा फैडरेशन नागपुर के तत्त्वावधान में दिनांक 14 एवं 15 फरवरी 2004 को ब्र. यशपालजी जैन जयपुर की प्रेरणा एवं पण्डित आलोककुमारजी शास्त्री कारंजा के सक्रिय सहयोग से आयोजित महाराष्ट्र प्रान्तीय विद्वत एवं कार्यकर्त्ता सम्मेलन श्री महावीर ब्रह्मचर्याश्रम जैन गुरूकुल, कारंजा में सानन्द सम्पन्न हुआ।

सम्मेलन में 40 विद्वान तथा 35 कार्यकर्त्ताओं द्वारा महाराष्ट्र प्रान्त में तत्त्वप्रचार-प्रसार करने हेतु विचार-विमर्श किया गया। सम्मेलन में यह निर्णय लिया गया कि स्थायी विद्वानों द्वारा महाराष्ट्र के कोने-कोने में तत्त्वप्रचार किया जायेगा तथा करीब 60 विद्वान जो महाराष्ट्र में सर्विस अथवा व्यवसाय करते हैं, उनका समय-समय पर उपयोग लिया जायेगा।

यह प्रत्येक जिनधर्मप्रेमी के लिये अत्यन्त गौरव व प्रसन्नता का विषय है कि माँ जिनवाणी को श्रवण कराने हेतु आसानी से श्रेष्ठ विद्वान उपलब्ध हो सकेंगे। अत: आपसे निवेदन है कि आप अपने नगर-ग्राम आदि में तत्त्वप्रचार का आयोजन रखें। आप किस माह की किस तारीखों में कौनसा अनुष्ठान करवाना चाहते हैं तथा आपको कितने विद्वानों की आवश्यकता होगी; इसकी पूर्व सूचना अवश्य प्रेषित करें। **विशेष बात यह है कि विद्वान का सम्पूर्ण खर्च एवं आवागमन व्यय भी संस्था ही वहन करेगी।** इस योजना का शुभारंभ शीघ्र ही एक उद्घाटन समारोह से किया जायेगा, जिसके स्थान एवं तारीख की सूचना आपको यथासमय मिल जायेगी।

द्विदिवसीय सम्मेलन में श्री रत्नत्रय मण्डल विधान का आयोजन भी किया गया। विधि-विधान के सम्पूर्ण कार्य पण्डित संजयकुमारजी शास्त्री नागपुर ने सम्पन्न कराये। साथ ही पण्डित धन्यकुमारजी भोरे, ब्र. यशपालजी जैन जयपुर, ब्र. धन्यकुमारजी बेलोकर गंजपंथा एवं पण्डित राकेशकुमारजी शास्त्री नागपुर के प्रवचन एवं मार्गदर्शन का लाभ भी स्थानीय एवं आगन्तुक महानुभावों को प्राप्त हुआ। रात्रि में जिनेन्द्र भक्ति का आयोजन पण्डित राजेन्द्रजी पाटील के द्वारा किया गया।

पत्र व्यवहार हेतु –

अखिल भारतीय जैन युवा फैडरेशन तत्त्व प्रचार-प्रसार विभाग, विश्वलोचन कुमार जैनी, हीरा कुटीर, मस्कासाथ, नागपुर-440 002

सम्पर्क सूत्र –

विश्वलोचन जैनी - (0712) 2762624, मो- 9422146642
सुदीप जैन नागपुर - (0712) 2760841, मो-3119763
नरेश जैन नागपुर - (0712) 2760440, मो- 3100022
ब्र. यशपाल जैन जयपुर - (0141) 2705581, 2707458
नंदकिशोर मांगुलकर काटोल - (07112) 223448
प्रमोद जैन नागपुर - (0712) 3093258
आलोक शास्त्री कारंजा - (07256) 223824
संजय शास्त्री नागपुर - (0712) 2763105
जिनचंद हेरले कोल्हापुर - (0230) 2466423

जैनपथप्रदर्शक के स्वामित्व का विवरण

फार्म नं. 4 नियम नं. 8

समाचार पत्र का नाम: जैनपथप्रदर्शक (हिन्दी)
प्रकाशन स्थान : श्री टोडरमल स्मारक भवन, ए-4, बापूनगर, जयपुर
प्रकाशन अवधि : पाक्षिक
मुद्रक : श्री प्रमोदकुमार जैन (भारतीय) जयपुर प्रिण्टर्स प्रा.लि., एम.आई.रोड, जयपुर
प्रकाशक का नाम : ब्र. यशपाल जैन (भारतीय) पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट, ए-4, बापूनगर, जयपुर -15 (राज.)
सम्पादक का नाम : श्री रतनचन्द भारिल्ल (भारतीय) श्री टोडरमल स्मारक भवन, ए-4, बापूनगर, जयपुर -15
स्वामित्व : पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट, ए-4, बापूनगर, जयपुर -15

मैं ब्र. यशपाल जैन एतद् द्वारा घोषणा करता हूँ कि मेरी अधिकृत जानकारी एवं विश्वास के अनुसार ऊपर दिये गये विवरण सत्य हैं।

प्रकाशक :
दिनांक : 1-3-2004 **ब्र. यशपाल जैन**
ट्रस्टी, पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट, जयपुर

मैं तो ....

मैं तो अरस-अरूपी ज्ञानानन्दस्वभावी आत्मा हूँ, जो अनादि-अनंत है, अजर-अमर है; न कभी जन्मता है और न कभी मरता है। जन्मना-मरना तो पर्याय पलटने को कहते हैं। मैं मात्र पर्याय नहीं हूँ। जिसमें से पर्याय आती है, मैं तो ऐसा त्रैकालिक पदार्थ हूँ। **– सत्य की खोज, पृष्ठ-88**

जैनपथप्रदर्शक (पाक्षिक) मार्च (प्रथम) 2004
J. P.C. 3779/02/2003-05

प्रति,

सम्पादक : **पण्डित रतनचन्द भारिल्ल** शास्त्री, न्यायतीर्थ, साहित्यरत्न, एम.ए., बी.एड.
प्रबन्ध सम्पादक : **पण्डित संजीवकुमार गोधा,** डबल एम.ए.जैनविद्या व तुलनात्मक धर्मदर्शन तथा इतिहास ❊ **पं. जितेन्द्र वि.राठी शास्त्री**
प्रकाशक एवं मुद्रक : **ब्र. यशपाल जैन** द्वारा जैनपथप्रदर्शक समिति के लिए जयपुर प्रिण्टर्स प्रा.लि., एम. आई. रोड, जयपुर से मुद्रित तथा त्रिमूर्ति कम्प्यूटर्स, ए-4, बापूनगर, जयपुर से प्रकाशित।

यदि न पहुँचे तो कृपया निम्न पते पर भेजें -
ए- 4 बापूनगर, जयपुर - 302015 (राज.)
फोन : (0141) 2705581, 2707458
तार : त्रिमूर्ति, जयपुर **फैक्स :** 2704127